NEW ERA AGRICULTURE MAGAZINE

सूक्ष्म जलवायु वाले क्षेत्रों में करोंदा की समृद्ध खेती

अनुज कुमार, हंस राज वर्मा, वेदांत सिंह, और सुप्रिया गोपाल नाईक

परिचय:

करोंदा, जिसे आमतौर पर "क्राइस्ट थॉर्न" कहा जाता है, यह एक सदाबहार, कांटों वाली फूलदार झाड़ी होती है, जो भारत के विभिन्न हिस्सों में प्राकृतिक रूप से झाड़ियों के रूप में पाई जाती है। यह मुख्यतः शुष्क उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में अच्छी वृद्धि करती है और इसके सुंदर तथा खाद्य फलों के कारण इसे पसंद किया जाता है।

इसे फलों के लिए ही नहीं, बल्कि बागों की सुरक्षा हेतु जीवित बाड़ के रूप में भी उपयोग में लाया जाता है। इसके पके हुए फलों में एक खास सुगंध और स्वाद होता है, जो हल्के खट्टे से लेकर मीठे तक हो सकता है। इन फलों को पका हुआ मिठाई के रूप में खाया जाता है। करोंदा पोषण की दृष्टि से भी अत्यंत समृद्ध है - यह आयरन (लोहा) का अच्छा स्रोत है और इसमें विटामिन C भी मौजूद होता है, जो एंटीस्कॉरबटिक गुणों से भरपूर होता है और एनीमिया के उपचार में सहायक है। नियमित रूप से इसका सेवन करने से संक्रमण और कैंसर जैसी बीमारियों के खतरे को कम किया जा सकता है। भारत के अलग-अलग क्षेत्रों में इसे विभिन्न नामों से जाना जाता है - हिंदी क्षेत्र में "करोंदा" या "जंगली करोंदा", तमिल में "चिरुकिला", "सिरुकिला" या "कलकाई", मराठी में "कारवंद", और बंगाली में इसे "कोरोमचा" के नाम से पहचाना जाता है।

उत्पत्ति और वितरण

करोंदे की उत्पत्ति मुख्यतः हिमालय क्षेत्र से मानी जाती है, लेकिन वर्तमान में यह गर्म जलवायु वाले क्षेत्रों में भी अच्छी तरह विकसित हो रहा है। यह भारत की एक देशी, फैलने वाली अर्ध-लता झाड़ी है। गर्म क्षेत्रों में इसकी अनुकूल वृद्धि के कारण यह विशेष रूप से महाराष्ट्र और गोवा के कोंकण क्षेत्र के पश्चिमी घाटों में बड़ी मात्रा में

अनुज कुमार, हंस राज वर्मा, वेदांत सिंह, और सुप्रिया गोपाल नाईक
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्राद्यौगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज अयोध्या

पाया जाता है। इसके अलावा, यह भारत और नेपाल के समशीतोष्ण हिमालयी शिवालिक पहाड़ियों में भी प्राकृतिक रूप से 30 से 1800 मीटर की ऊँचाई तक देखा जाता है। यह पौधा बंजर और सीमांत भूमि में भी आसानी से उग सकता है, जिससे यह भारत के राजस्थान, गुजरात, बिहार, पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में सीमित स्तर पर उगाया जाता है। इसके अलावा, करोंदा अन्य दक्षिण एशियाई देशों जैसे श्रीलंका के तराई क्षेत्र, पाकिस्तान, नेपाल, अफगानिस्तान और बांग्लादेश में भी पाया जाता है।

जलवायु और मृदा

करोंदा एक अत्यंत सहनशील और सूखा-प्रतिरोधी पौधा है, जो वर्षा आधारित फसल के रूप में बिना अधिक देखभाल के अच्छी उपज देता है। यह मुख्य रूप से उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु में बेहतर प्रदर्शन करता है। हालांकि, अत्यधिक वर्षा और जलभराव इसकी खेती के लिए अनुकूल नहीं होते, क्योंकि ये स्थितियाँ पौधे की वृद्धि को बाधित कर सकती हैं। यह विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है, जिनमें लवणीय और क्षारीय मृदाएँ भी शामिल हैं। करोंदे की खेती के लिए शुष्क क्षेत्र और 23–30°C का तापमान आदर्श माना जाता है। यह पौधा कम तापमान और पाले के प्रति संवेदनशील होता है, इसलिए समशीतोष्ण जलवायु जिसमें पाला या हिमपात होता है, इसके लिए उपयुक्त नहीं है। यह सैंडी लूम, लैटराइट, एलुवियल सैंडी और कैलकेरियस मिट्टी में भी अच्छी तरह बढ़ता है, लेकिन सर्वोत्तम वृद्धि और उत्पादन के लिए अच्छी जलनिकासी वाली दोमट बलुई मिट्टी सबसे उपयुक्त मानी जाती है। यह पौधा 5.0 से 8.0 pH तक की मिट्टी में अच्छे से पनप सकता है।

वनस्पति

करोंदा एक सदाबहार, झाड़ीदार पौधा है, जिसकी ऊँचाई सामान्यतः 2 से 4 मीटर तक होती है। इसकी शाखाओं पर तीखे कांटे होते हैं और तने से सफेद दूधिया लेटेक्स (द्रव) निकलता है। इसके फूल छोटे, लगभग 3–5 सेंटीमीटर व्यास के होते हैं और सफेद रंग के होते हैं। फल गुच्छों में विकसित होते हैं, जिनमें प्रति गुच्छा 3 से 10 फल हो सकते हैं। कच्चे फलों का रंग गुलाबी-सफेद होता है, जो पकने के साथ गहरे लाल, बैंगनी या काले रंग में बदल जाता है। हालांकि, जीनोटाइप में अंतर होने के कारण पके हुए फलों का रंग सफेद, हरा, गुलाबी या लाल भी हो सकता है। करोंदे की पत्तियाँ सामान्यतः 4-6 इंच लंबी और 2-3 इंच चौड़ी होती हैं। ये पत्तियाँ लंबी-अंडाकार तथा शंकु आकार की होती हैं, जिनका ऊपरी भाग गहरे हरे रंग का और निचला भाग हल्के भूरे रंग का होता है।

फूल और फल का विवरण

फूल

करोंदे के फूल छोटे, गुच्छेदार होते हैं, जिनका व्यास 3-5 सेमी होता है। ये सफेद या पीले रंग के होते हैं। इनका फूलने का समय जनवरी से फरवरी तक होता है।

फल

करोंदे के फल छोटे बेरी के आकार के होते हैं, जिनके सिरे थोड़े मुड़े हुए होते हैं। इनका आकार अंडाकार से लेकर अंडवृत्ताकार तक होता है, और इनकी लंबाई आमतौर पर 1 से 3 सेंटीमीटर होती है। फल गुच्छों में (3 से 10 के समूह में) लगते हैं और विभिन्न पकाव अवस्थाओं में पाए जाते हैं, जिससे पौधे को विविध रंग-रूप मिलता है। फल की अपरिपक्व अवस्था में रंग हरा होता है, जो धीरे-धीरे सफेद, फिर चटकीले गुलाबी-

लाल, और अंततः गहरे बैंगनी या लगभग काले रंग में परिवर्तित हो जाता है।

पकने पर इनकी त्वचा पतली, थोड़ी खुरदरी और चमकदार हो जाती है, जो समय के साथ झुर्रीदार हो सकती है। इन फलों का गूदा मुलायम, रसयुक्त और हल्के से गहरे लाल रंग का होता है, जिसमें 2 से 8 चपटे भूरे रंग के बीज होते हैं। सेवन से पहले फलों को अच्छी तरह धोना और कटाई के दौरान निकलने वाले दूधिया लेटेक्स को साफ करना आवश्यक होता है। इनका स्वाद खट्टा और कसैला होता है। पोषण की दृष्टि से ये फल विटामिन C और आयरन के अच्छे स्रोत माने जाते हैं।

प्रजनन

करोंदा का प्रजनन मुख्य रूप से बीजों के माध्यम से और शाकीय विधियों जैसे कि कटिंग, कलम बांधना (बडिंग) और लेयरिंग द्वारा किया जाता है। करोंदा की प्रमुख प्रजनन विधियाँ निम्नलिखित हैं:

1. बीज द्वारा प्रजनन
2. कटिंग (शाखा कलम)
3. कलम बाँधना (बडिंग)
4. लेयरिंग (स्तरीकरण विधि)

1. बीज द्वारा प्रवर्धन

करोंदा पौधों का प्रवर्धन आसानी से बीजों द्वारा किया जा सकता है। फलों की तुड़ाई के तुरंत बाद बीजों को एकत्र करना चाहिए। निकाले गए बीजों को तुरंत बोने से अंकुरण बेहतर होता है। बीजों को ट्रे में उगाने के बाद 3-4 पत्तियों की अवस्था में पॉलीथीन बैगों में स्थानांतरित कर दिया जाता है। लगभग 8-10 महीने बाद पौधे रोपण के लिए तैयार हो जाते हैं। बीजरहित या कम बीज वाली किस्मों में अंकुरण कम होता है। बीज से उगाए गए पौधों में फल के आकार, रंग और स्वाद में बहुत अधिक भिन्नता पाई जाती है। अतः किस्मों या उन्नत पंक्तियों के गुणों को सुरक्षित रखने के लिए बीज प्रवर्धन उपयुक्त नहीं माना जाता।

2. शाकीय प्रवर्धन

किस्मों या उन्नत पंक्तियों का प्रवर्धन तने की कटिंग, बडिंग और एयर लेयरिंग जैसी शाकीय विधियों से किया जाता है, जिससे शुद्ध प्रकार का रोपण सामग्री प्राप्त की जा सके।

3. कटिंग

करोंदा पौधों का प्रवर्धन सेमी-हार्ड वुड कटिंग से किया जा सकता है। सामान्यतः 25-30 सेमी लंबी और 1 इंच व्यास वाली कटिंग का उपयोग किया जाता है। कटिंग लगाने के लिए जून-जुलाई का महीना सबसे उपयुक्त होता है। सीएचईएस, चेट्टल्ली में किए गए परीक्षणों में पाया गया कि सेमी-हार्ड वुड कटिंग, सॉफ्ट वुड और हार्ड वुड कटिंग की तुलना में अधिक सफल रही। जुलाई-अगस्त में लगाई गई सेमी-हार्ड वुड कटिंग्स की सफलता दर 30-40% रही। IBA (इंडोल ब्यूट्रिक एसिड) के उपयोग से हार्ड वुड और सॉफ्ट वुड कटिंग की सफलता दर में कोई विशेष सुधार नहीं देखा गया। टेबल उपयोग की बौल्ड फल वाली किस्मों में अचार किस्मों की तुलना में सफलता दर कम पाई गई।

4. एयर लेयरिंग

करोंदा पौधों की एयर लेयरिंग जून-जुलाई के महीनों में सफल और प्रभावशाली पाई गई है। विभिन्न वर्षों में इसकी सफलता दर 30 से 60 प्रतिशत के बीच रही। लेयरिंग की गई शाखाओं को सितंबर में मूल पौधों से अलग किया गया और उन्हें पॉलीथीन बैगों में रोपित किया गया। ये पौधे लगभग 6-7 महीनों में रोपण के लिए तैयार हो जाते हैं।

रोपण की विधि

करोंदा की सफल खेती के लिए रोपण से पहले भूमि को समतल करना और उसमें मौजूद पुराने पौधों तथा खरपतवार को हटा देना आवश्यक है। रोपण के लिए 3×3 फीट आकार के गड्ढे अप्रैल-मई माह में खोदे जाने चाहिए, खासकर यदि मिट्टी पथरीली हो। मानसून से पहले इन गड्ढों को ऊपर की मिट्टी में 5–10 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद, 1 किलोग्राम नीम की खली, 50 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट तथा 50 ग्राम म्यूरिएट ऑफ पोटाश मिलाकर भरना चाहिए। टेबल उपयोग वाली किस्मों को चौरस पद्धति में 3×3 मीटर की दूरी पर रोपित किया जाता है। रोपण का उपयुक्त समय जून-जुलाई माना जाता है। वर्षा ऋतु से पहले की गई प्रारंभिक वर्षा से मिट्टी के बैठ जाने के बाद भूमि को समतल कर लिया जाता है ताकि जल निकासी बनी रहे। हेज (मेढ़) के रूप में रोपण करने हेतु पौधों को 2 फीट की दूरी पर 1×1 फीट के गड्ढों में लगाया जाता है। रोपण के तुरंत बाद सिंचाई करनी चाहिए और जब तक पौधा अच्छी तरह स्थापित न हो जाए, तब तक नियमित सिंचाई आवश्यक होती है।

सिंचाई प्रबंधन

करोंदा एक अत्यंत कठोर और सूखा सहनशील पौधा है, जो कम पानी में भी अच्छी तरह से विकसित हो सकता है। नवरोपित पौधों को नियमित सिंचाई की आवश्यकता होती है। छोटे पौधों को सर्दियों में हर 10-15 दिन पर और गर्मियों में हर 6-7 दिन पर सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई आमतौर पर बेसिन या फ्लड पद्धति से की जाती है, लेकिन ड्रिप सिंचाई प्रणाली जल संरक्षण और पौधों की वृद्धि के लिए अधिक प्रभावी पाई जाती है। प्रौढ़ बागों में सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। पत्तियों और अन्य अपशिष्टों से मल्चिंग करके मिट्टी की नमी को संरक्षित किया जा सकता है, जो पानी की बचत में मदद करता है।

करोंदा में पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए सिंचाई के बाद निंदाई करनी चाहिए। प्रत्येक सिंचाई के बाद निंदाई आवश्यक होती है।

खाद और उर्वरक

पौधों की उत्पादकता और गुणवत्ता बनाए रखने में पोषण संतुलन एक प्रमुख भूमिका निभाता है। करोंदा के पौधों को यदि केवल रक्षक बाड़ (हेज) के रूप में लगाया जाए, तो आमतौर पर उन्हें खाद या उर्वरक नहीं दिया जाता। लेकिन शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि उचित मात्रा में खाद देने से करोंदा के पौधों की वृद्धि और विकास में सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। खाद और उर्वरकों की उपयुक्तता किस्म, जलवायु तथा मिट्टी की प्रकृति पर निर्भर करती है, इसलिए अलग-अलग क्षेत्रों में इनका प्रभाव भिन्न हो सकता है। एक वर्ष पुराने पौधे के लिए 5 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद (FYM) के साथ-साथ 100 ग्राम NPK (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश) मिश्रण देना चाहिए। यह मात्रा हर साल समान अनुपात में बढ़ाते हुए चौथे वर्ष तक 15-20 किग्रा FYM और 400 ग्राम NPK तक की जानी चाहिए। उर्वरक देने का सबसे उपयुक्त समय फलों की तुड़ाई के बाद, यानी जून-जुलाई में होता है।

प्रशिक्षण और छंटाई

प्रारंभिक अवस्था में करोंदा का तना कमजोर होने के कारण रोपण के बाद पौधे को सहारा देना आवश्यक होता है। यह पौधा ज़मीन की सतह से थोड़ा ऊपर कई शाखाएं विकसित करने की प्रवृत्ति रखता है, इसलिए नीचे की ओर बढ़ने वाली शाखाओं को हटाना जरूरी होता है ताकि देखरेख और अन्य कृषि कार्यों में सुविधा बनी रहे। पौधे को सही ढंग से आकार देने के लिए शुरुआती वर्षों में प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) देना बहुत जरूरी होता है। अनावश्यक शाखाओं की छंटाई करके मुख्य तने

और मुकुट के विकास को प्रोत्साहित किया जाता है। पौधे की मुख्य संरचना भूमि स्तर से 30–45 सेमी ऊपर तीन से चार विपरीत दिशा में बढ़ने वाली शाखाओं के माध्यम से तैयार की जाती है। बेहतर उपज के लिए इन्हें ओपन सेंटर प्रणाली में प्रशिक्षित किया जाता है। प्रशिक्षण की यह प्रक्रिया केवल पहले दो वर्षों तक अपनाई जाती है। एक बार पौधा पूर्ण रूप से विकसित हो जाए, तो उसकी आकृति बनाए रखने और अच्छे उत्पादन के लिए नियमित छंटाई आवश्यक होती है। शुष्क मरुस्थलीय क्षेत्रों में पौधे की वृद्धि धीमी होने के कारण बहुत कम छंटाई की जरूरत होती है, जबकि नमी और गर्मी वाले क्षेत्रों में पौधे की वृद्धि तेज़ होने के कारण हर वर्ष व्यापक छंटाई करनी पड़ती है। कोorg जैसे क्षेत्रों में सामान्यतः अक्टूबर माह में छंटाई की जाती है।

प्रजातियाँ

करोंदा की किस्मों को मुख्यतः उनके फल के रंग या उपयोग के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। इनमें कुछ किस्मों के फल गुलाबी-सफेद, कुछ हरापन लिए गुलाबी और कुछ लाल-बैंगनी रंग के होते हैं। गुलाबी रंग की किस्मों के अपरिपक्व फल सफेद होते हैं, जो पकने के साथ गुलाबी रंग में बदल जाते हैं। वहीं, लाल-बैंगनी रंग की किस्मों के कच्चे फल हरे होते हैं और पकने पर लाल-बैंगनी हो जाते हैं। करोंदे की किस्मों को उनके उपयोग के अनुसार दो प्रमुख वर्गों में भी बाँटा जाता है-अचार निर्माण हेतु और दूसरा टेबल उपयोग (सीधे खाने) के लिए।

गत बीस वर्षों में करोंदा की कुछ नई किस्में विकसित की गई हैं। अचार के लिए उपयुक्त 'पंत मनोहर', 'पंत सुधर्शन' और 'पंत सुवर्णा' किस्मों का विकास गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय द्वारा किया गया है। इन किस्मों के फल छोटे आकार (लगभग 3.5 ग्राम) के होते हैं और इनमें अम्लीयता अधिक होती है। इसके विपरीत, 'कोंकण बोल्ड', 'CHES K-II-7' और 'CHES K-35' जैसी किस्में बड़े फलों वाली होती हैं और टेबल उपयोग के लिए अधिक उपयुक्त मानी जाती हैं।

1. पंत मनोहर

यह किस्म 2007 में गोविंद बल्लभ पंत कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर (उत्तराखंड) द्वारा विकसित की गई थी। इस पौधे का आकार मध्यम होता है और यह घने झाड़ियों के रूप में उगता है। इसके फल गहरे गुलाबी रंग के होते हैं, जिनका वजन 3.49 ग्राम होता है और ये सफेद पृष्ठभूमि पर हल्के गहरे गुलाबी रंग के होते हैं। हर फल में औसतन 3.94 बीज होते हैं, 88.27% गूदा, 12.77% सूखा वजन, 3.92% कुल घुलनशील ठोस पदार्थ (TSS), 1.82% कुल टाइट्रेटेबल अम्लता और प्रति पौधा 27 किलोग्राम उपज प्राप्त होती है।

2. पंत सुधर्शन

इस किस्म को वर्ष 2007 में गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर (उत्तराखंड) द्वारा विकसित किया गया था। इसके पौधे घनी और मध्यम आकार की झाड़ियों के रूप में उगते हैं। फलों का रंग सफेद आधार पर गुलाबी आभा लिए होता है, जो परिपक्व होने पर गहरे भूरे रंग में बदल जाता है। प्रत्येक फल का औसत वजन 3.46 ग्राम होता है और इसमें लगभग 4.68 बीज पाए जाते हैं। फलों में 88.47% भाग गूदा होता है, जबकि 11.83% सूखा पदार्थ होता है। इसके अलावा, फलों में 3.45% कुल घुलनशील ठोस (TSS) और 1.89% कुल टाइट्रेटेबल अम्लता पाई जाती है। यह किस्म प्रति पौधा औसतन 29 किलोग्राम उपज देती है।

3. पंत सुवर्णा

यह किस्म वर्ष 2007 में गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर (उत्तराखंड) द्वारा विकसित की गई थी। इसके पौधे सीधे और खड़े स्वरूप में विकसित होते हैं तथा कम घने होते हैं। फलों की सतह हरे रंग की पृष्ठभूमि पर गहरे भूरे रंग की आभा लिए होती है, जो पकने पर हरे से गहरे भूरे रंग में परिवर्तित हो जाती है। इसका औसत फल भार 3.62 ग्राम होता है, जिसमें लगभग 5.89 बीज पाए जाते हैं। फलों में 88.27% गूदा, 12.39% सूखा पदार्थ, 3.836% कुल घुलनशील ठोस (TSS) और 2.30% कुल टाइट्रेटेबल अम्लता पाई जाती है। यह किस्म प्रति पौधा औसतन 22 किलोग्राम उपज देने में सक्षम है।

4. कोंकण बोल्ड

यह करोंदा की एक उत्कृष्ट किस्म है जिसे 2004 में कोंकण कृषि विद्यापीठ, दापोली (महाराष्ट्र) द्वारा विकसित किया गया। इसके पौधे मध्यम कद के होते हैं और उनमें तीव्र विकास क्षमता देखी जाती है। कूर्ग की जलवायु में यह किस्म फरवरी से मार्च के बीच फूल देती है और फल मई-जून में पकते हैं। इसके फल लंबे अंडाकार आकार के होते हैं जिनका वजन लगभग 12 से 15 ग्राम होता है। फल गहरे बैंगनी रंग के होते हैं और स्वाद में अत्यंत स्वादिष्ट होते हैं। इनमें कुल घुलनशील ठोस (TSS) की मात्रा 10–12° ब्रिक्स पाई जाती है। यह किस्म अत्यधिक उत्पादक है और प्रति पौधा 2000–2500 फल वार्षिक रूप से देती है। यह मुख्य रूप से टेबल उपयोग के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

5. सीएचईएस-के-II-7

यह एक उन्नत चयनित किस्म है जिसे सीएचईएस, चेट्टल्ली में बीजजनित पौधों की जनसंख्या से चयनित किया गया है। इसके पौधे मध्यम आकार के होते हैं और फरवरी-मार्च में फूल आते हैं, जबकि फल मई-जून में पककर तैयार होते हैं। इसके फल लम्बे आकार के होते हैं, जिनका औसतन वजन 12–13 ग्राम होता है। फल गहरे काले-बैंगनी रंग के होते हैं और इनमें पतली त्वचा होती है। प्रत्येक फल में औसतन 0.3 बीज पाए जाते हैं, जिससे यह किस्म लगभग बीजरहित मानी जाती है। चार वर्ष की आयु वाले पौधे प्रतिवर्ष 1800 से 2100 फल देते हैं। फलों का स्वाद मीठा होता है, जिनमें कुल घुलनशील ठोस (TSS) 15° ब्रिक्स और अम्लता 1.08% होती है। यह किस्म टेबल उपयोग और प्रसंस्करण दोनों के लिए उपयुक्त है।

6. सीएचईएस-के-वी-6

यह भी एक उन्नत चयनित किस्म है जिसे सीएचईएस, चेट्टल्ली में बीजजनित पौधों की जनसंख्या से चिन्हित किया गया है। इसके पौधे मध्यम आकार के होते हैं और इनमें जनवरी-फरवरी में पुष्पन होता है, जबकि फल मई-जून में पकते हैं। फलों का औसत वजन 13 से 15 ग्राम तक होता है, जिनका रंग गहरा काला-लाल होता है और गूदा लाल रंग का तथा बीज अत्यंत कम होते हैं। फलों में कुल घुलनशील ठोस (TSS) लगभग 16° ब्रिक्स, अम्लता 1.18% और विटामिन C की मात्रा 21 मिग्रा प्रति 100 ग्राम गूदा पाई जाती है। चार वर्ष पुराने पौधे प्रति वर्ष 1200 से 1500 फल उत्पन्न करने में सक्षम होते हैं। यह किस्म विटामिन B का भी उत्तम स्रोत है और टेबल उपयोग के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

7. मारू गौरव

यह किस्म जोधपुर, राजस्थान स्थित केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित की गई है। यह एक उच्च उत्पादक किस्म है जिसकी औसत उपज प्रति पौधा 40 किलोग्राम से अधिक होती है। इसका विकास प्रकार फैलावदार है और यह नियमित फलदायक

है। फलों में TSS लगभग 9.4° ब्रिक्स होता है। औसत फल वजन 3.74 ग्राम होता है और फल अगस्त-सितंबर में पकते हैं। यह विटामिन C (35.88 मि.ग्रा./100 ग्राम) का अच्छा स्रोत है।

8. थार कमल

यह किस्म वर्ष 2015 में केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान) द्वारा विकसित और जारी की गई थी। यह किस्म अपने फूलों की संख्या, फलधारणा और गुणवत्ता के लिहाज़ से कई अन्य किस्मों से श्रेष्ठ साबित हुई है। प्रति पौधा औसत उपज लगभग 13 किलोग्राम होती है। इसके फलों में कुल घुलनशील ठोस (TSS) की मात्रा 9.54° ब्रिक्स पाई जाती है। इसका पौधा फैलावदार प्रकृति का होता है, आकार में बौना होता है और नियमित रूप से फल देने वाला होता है।

महत्व

करोंदा एक बहुमूल्य फल है, जिसे उसके पोषक तत्वों, औषधीय गुणों और विविध उपयोगों के कारण विशेष महत्त्व प्राप्त है। यह एक कम उपयोग में लाया जाने वाला फल होते हुए भी अपनी बहुपयोगिता और संभावित लाभों के कारण कृषि एवं स्वास्थ्य दोनों ही दृष्टिकोणों से मूल्यवान माना जाता है। करोंदा कई कारणों से उपयोगी है। इसमें विटामिन C की प्रचुरता होती है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने में सहायक है और एक प्रभावशाली एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करता है। इस फल में आहार रेशा (डायटरी फाइबर) भी भरपूर मात्रा में होता है, जो पाचन क्रिया को बेहतर बनाता है और जठरांत्र तंत्र के स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है। इसके अतिरिक्त, इसमें फाइटोकैमिकल्स भी पाए जाते हैं, जो स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होते हैं और इनमें सूजन-रोधी तथा कैंसर-रोधी गुण मौजूद होते हैं। करोंदा एक मजबूत एवं अनुकूलनशील फसल है, जो विभिन्न जलवायु परिस्थितियों में आसानी से उगाई जा सकती है। इस कारण यह विभिन्न एग्रो-क्लाइमेटरिक क्षेत्रों में खेती के लिए उपयुक्त है और खाद्य सुरक्षा के साथ-साथ कृषि विविधता को बढ़ावा देने में भी सहायक है।

पोषण मूल्य

करोंदे में विटामिन C भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो ऊतकों की वृद्धि और मरम्मत में सहायक होता है। यह फल लीवर को स्वस्थ बनाए रखने में प्रभावी है, क्योंकि यह अत्यधिक पित्त स्राव को नियंत्रित करता है। करोंदा एक प्राकृतिक दर्द निवारक (एनाल्जेसिक) के रूप में भी कार्य करता है, जो दस्त की स्थिति में आराम प्रदान करता है। इसके अलावा यह हृदय की रक्षा करता है, सूजन कम करता है, सर्दी-खांसी के इलाज में मदद करता है, रक्त को शुद्ध करता है, रक्तचाप को नियंत्रित करता है और कब्ज के उपचार में भी लाभकारी होता है। साथ ही, करोंदे को कामोत्तेजक, ज्वरनाशक, भूखवर्धक, स्कर्वीरोधी (scurvy से बचाने वाला), कृमिनाशक और कसैला (astringent) गुणों के लिए भी जाना जाता है, जो इसे औषधीय दृष्टिकोण से और भी अधिक उपयोगी बनाते हैं।

उपयोग

भारतीय पारंपरिक औषधि पद्धति में करोंदे का उपयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है। विशेष रूप से आयुर्वेद में इस फल का प्रयोग विभिन्न रोगों के उपचार हेतु किया जाता है, जैसे– भूख न लगना (एनोरेक्सिया), रक्ताल्पता (एनीमिया), अल्सर, ताजे या संक्रमित घाव, त्वचा रोग, मूत्र संबंधी विकार और मधुमेह से उत्पन्न अल्सर। इसके पके हुए फलों से जेली, सॉस, करिसा क्रीम और जेली सलाद जैसे स्वादिष्ट फल-उत्पाद तैयार किए जाते हैं। पके फलों में हल्की सुगंध होती है और इनका स्वाद उप-खट्टे से लेकर मीठे तक होता है, जबकि कच्चे

फल अपने खट्टे और कसैले स्वाद के कारण अचार, चटनी और सॉस जैसे उत्पादों में उपयोग किए जाते हैं। करोंदा की जड़ों में भी औषधीय गुण होते हैं—ये कीट-प्रतिरोधक, पाचन को बढ़ावा देने वाली (स्टोमकिक) और कृमिनाशक (एन्थेल्मिंटिक) मानी जाती हैं। यह फल बाजार में भी आसानी से उपलब्ध होता है और इसका प्रसंस्करण करके इसे कैंडिड मुरब्बा या बीजरहित चेरी के रूप में बोतलबंद उत्पाद के रूप में बेचा जाता है।

तुड़ाई एवं उपज

करोंदा तीसरे वर्ष से फल देना प्रारंभ करता है। वेस्टर्न घाट्स में दिसंबर से मार्च तक फूल आते हैं और अप्रैल से जून तक फल पकते हैं। फलों के रंग परिवर्तन के आधार पर उनकी परिपक्वता का निर्धारण किया जाता है। चूंकि सभी फल एक साथ नहीं पकते, इसलिए 3-4 बार तुड़ाई की जाती है। तुड़ाई हाथ से की जाती है। डंठल सहित फल तोड़ने से लेटेक्स का रिसाव कम होता है और फलों की गुणवत्ता एवं भंडारण क्षमता बढ़ती है। एक पौधे से 4-5 किग्रा फल प्राप्त हो सकते हैं। यदि करोंदा को बागवानी प्रणाली में लगाया जाए तो 10-15 किग्रा प्रति पौधा उपज संभव है। फल कमरे के तापमान पर 3-4 दिन तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं।

कीट एवं रोग प्रबंधन

करोंदा की खेती करते समय कीट एवं रोगों का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। ये पौधों की जड़ों, पत्तियों, आदि को नुकसान पहुंचाकर वृद्धि को रोक सकते हैं। प्रमुख कीट और रोग निम्नलिखित हैं:

A. पत्ती खाने वाली इल्ली

लक्षण

इल्ली पौधों की पत्तियों को खाकर भारी नुकसान पहुंचाती है, जिससे पौधे की वृद्धि प्रभावित होती है।

नियंत्रण

- **i.** पत्ती खाने वाली इल्लियों पर नियंत्रण के लिए कीटनाशकों, जैविक नियंत्रण विधियों तथा सांस्कृतिक तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है।
- **ii.** मोनोक्रोटोफॉस @ 2 मि.ली./लीटर पानी की दर से छिड़काव करके पत्ती खाने वाली इल्लियों को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है।

B. फल मक्खी

लक्षण

पके हुए फलों पर फल मक्खी का प्रकोप होता है। यह समस्या दक्षिणी राज्यों में अधिक देखी जाती है। मादा फल मक्खी अपनी नुकीली अंडे देने की संरचना (ओविपोजिटर) की सहायता से परिपक्व फलों पर अंडे देती है। अंडों से निकलने वाले कीट फल के गूदे को खाकर उसे सड़ा देते हैं जिससे फल गिरने लगते हैं। अंडे देने की जगह के आसपास भूरे रंग का धब्बा बन जाता है। सड़े हुए फलों से कीट मिट्टी में गिरते हैं और वहाँ प्यूपा अवस्था में चले जाते हैं।

नियंत्रण

- **i.** पूर्व कटाई एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) के साथ-साथ सफाई (गिरे एवं संक्रमित फलों का संग्रह एवं नष्ट करना) से फल मक्खी को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है।
- **ii.** मेथाइल यूजेनॉल ट्रैप @ 4–6 प्रति एकड़ लगाना चाहिए।
- **iii.** डेल्टामेथ्रिन @ 2 मि.ली. + 100 ग्राम गुड़ को 1 लीटर पानी में मिलाकर चारा स्प्रे के रूप में छिड़काव करना चाहिए।

रोग एवं उनका प्रबंधन

A. एन्थ्रेक्नोज

लक्षण

पत्तियों पर अनियमित आकार के काले और भूरे धब्बे दिखाई देते हैं। जैसे-जैसे पत्तियों का आकार बदलता है, इन धब्बों का आकार भी बदलता रहता है। फल एवं शाखाएं भी इस रोग से प्रभावित होती हैं।

नियंत्रण

- **i.** फसल के प्रारंभिक अवस्था में कॉपर ऑक्साइड, कॉपर ट्राइऑक्साइड जैसे कॉपर आधारित कवकनाशी का छिड़काव करें।
- **ii.** बाग की सफाई रोग कारक को कम करने में सहायक होती है। जैसे – गिरी हुई पत्तियों और फलों को जलाना।

इक्कीसवीं सदी में बागवानी का भविष्य लघु फलों, विशेषकर करोंदा में निहित है। करोंदा की खेती लाभप्रदता, उत्पादकता, गुणवत्ता, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में कई लाभ प्रदान कर सकती है। ग्रामीण क्षेत्रों में बड़ी संख्या में लोग पोषण की पूर्ति के लिए करोंदा जैसे स्थानीय फलों पर निर्भर हैं, जिन्हें वे लंबे समय से उपयोग करते आ रहे हैं और इसके औषधीय व पोषण गुणों से परिचित हैं। यह पौधा कम देखभाल में परती भूमि पर भी पनप सकता है।

हालांकि, करोंदा आधारित प्रसंस्कृत उत्पादों की संभावनाओं का अभी तक पूर्ण दोहन नहीं हुआ है, लेकिन कुछ शोधकर्ताओं द्वारा ऐसे उत्पाद विकसित करने के प्रयास किए गए हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस फल से विविध मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार कर, उनके माध्यम से अपव्यय को घटाया जा सकता है, निर्यात बढ़ाया जा सकता है और समाज के कमजोर वर्गों की पोषण व आर्थिक स्थिति सुधारी जा सकती है। करोंदा जैसे कम प्रचलित फलों में फसल सुधार की विशाल संभावनाएँ हैं। पारंपरिक एवं आधुनिक प्रजनन तकनीकों जैसे जेनेटिक इंजीनियरिंग, जीनोम एडिटिंग, मार्कर-असिस्टेड सिलेक्शन तथा जेनोमिक सिलेक्शन के ज़रिए इसकी उपज, गुणवत्ता, रोग प्रतिरोध, सूखा सहनशीलता और भंडारण क्षमता में सुधार संभव है। ऐसे प्रयास न केवल पोषणयुक्त विविध आहार की मांग को पूरा करेंगे, बल्कि किसानों को नए आर्थिक अवसर भी प्रदान करेंगे और सतत कृषि को बढ़ावा देंगे। अंततः, करोंदा की वैज्ञानिक खेती और सुधार इसे एक व्यावसायिक और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त फसल के रूप में स्थापित कर सकते हैं।

NEW ERA
AGRICULTURE MAGAZINE